International Journal of Academic Research and Development
ISSN: 2455-4197, Impact Factor: RJIF 5.22
www.academicsjournal.com
Volume 2; Issue 4; July 2017; Page No. 744-746

यषपाल के उपन्यासों में लोक–भाशा का प्रयोग

[1] डॉ राजकुमार नाइक, [2] वंदना रानी, [3] डॉ रमेष कुमार

[1] प्रो0स्नातकोत्तर हिंदी विभाग, दक्षिणी हिंदी प्रचार सभा, मद्रास
[2] पीएच0डी0 षोधार्थी, दक्षिणी हिंदी प्रचार सभा,मद्रास
[3] हिंदी विभाग, जे0सी0डी0 विद्यापीठ, सिरसा, हरियाणा

प्रस्तावना

यषपाल ने अपने उपन्यासों में लोक–संस्कृति व लोक–जीवन को उसके यथार्थ रूप में प्रकट करने हेतु पात्रानुकूल भाशा का प्रयोग किया है। उनकी भाशा न केवल उनके पात्रों की षिक्षा के अनुरूप है, अपितु उनके भावों एवं विचारों के भी अनुरूप है। जैसे – 'दादा–कॉमरेड' उपन्यास में एक युवक जब यषोदा के घर में रात के समय आता है तो वह कहता है, ''अब मैं आ ही गया हूँ। वे षायद घबराएं। चुपचाप रहने दीजिए। खटका न होना ही अच्छा है। जरा–सी बात से कुछ का कुछ हो सकता है। मैं सुबह तक चला जाऊँगा। उस समय आप उन्हें सब कुछ समझा सकेंगी। इसमें कुछ भी हर्ज न होगा। आप आराम कीजिए।''[1] उपन्यासों में व्यवहार में प्रयोग की गई भाशा जनजीवन से जुड़ी हुई है। यह भाशा आम बोलचाल की भाशा है।

यषपाल जी एक सफल लेखक हैं। अतः जहाँ उनकी कहानियाँ अनुपम और निराली हैं, वहीं उनके उपन्यास भी हिन्दी साहित्य में अपनी पहचान बनाए हुए हैं, जो लघु आकृति के होकर भी भावों की विषालता को धारण किए हुए हैं। यषपाल की भाशा–षैली हिन्दी उपन्यास के क्षेत्र में निःसन्देह अनुपम है वह प्रभावषाली भी है व आर्कशक भी। उनकी भाशा षुद्ध, सरल, सहज, प्रवाहपूर्ण, मार्मिक व साहित्यिक खड़ी बोली है। यषपाल जी के कई उपन्यास लम्बे हैं तो कुछ छोटे। रचना–पद्धति की कोई एक निश्चित प्रक्रिया नहीं है। वह आकाश के मेघखण्डों के समान नित्य नवीन रूप ग्रहण करता है, जो विकास के अनुकूल है और रूढ़ि के प्रतिकूल। आकाश के मेघखण्डों के समान नित्य नूतन रूप धारण करने पर भी वह अपने समान स्वच्छन्द तथा उच्छृंखल नहीं, क्योंकि विषय की अनुरूपता तथा अनुकूल्यता से अनिवार्यतः बंधा हुआ है।

काव्य–शिल्प के स्वरूप के विषय में भारतीय तथा पाश्चात्य विद्वानों ने विभिन्न विचार प्रस्तुत किए हैं। 'काव्यकृति के निर्माण में जिन उपादानों द्वारा काव्य का ढ़ाँचा तैयार किया जाता है वे सब काव्य–शिल्प के तत्त्व हैं।'[2]

युनानी समीक्षक लोंजाइनस ने सुन्दर शब्द योजना को शिल्प बताते हुए कहा– 'सुन्दर शब्द योजना, व्यक्त कवि मानस का विशिष्ट व्यापार ही शिल्प है।'[3]

कोलरिज– 'अच्छा भाव कृति का शरीर है, फैन्सी उसके वस्त्र, मनोभाव इसका जीवन, कल्पना इसकी आत्मा जो सब में है, ये सब मिलकर कला शिल्प को जन्म देते हैं।'[4]

भाषा ही अपने विविध वर्णों द्वारा भाव, विचारों, पदार्थों आदि के संश्लिष्ट चित्र अंकित किया करती है, भाषा के द्वारा ही भाव से परिपूर्ण स्वर्गीय संगीत की सृष्टि होती है और भाषा ही ज्ञान–विज्ञान की असीम निधियों का उद्घाटन करके पाठकों के हृदय में उन्हें प्राप्त करने की प्रेरणा एवं जिज्ञासा उत्पन्न करती है। इस प्रकार भाषा एक ओर तो भावों एवं विचारों की अभिव्यक्ति का साधन है और दूसरी ओर वह सांसारिक पदार्थों का बोध कराती है। भाषा अप्रस्तुत–योजना का मूल मंत्र और अभिव्यक्ति का साधन है। पंत ने भाषा को संसार का नादमय चित्र कहा है।[5] सशक्त और समर्थ भाषा के अभाव में भावों की अभिव्यक्ति सशक्त और प्रभावशाली नहीं हो पाती तथा भाव–प्रकाशन भी शुद्ध न होकर सड़ा गला ही होता है। भाषा की वाक्यावली सुसंगठित और परिमार्जित होनी चाहिए।

यषपाल के उपन्यास भाशा की दृश्टि से अत्यंत समृद्ध हैं। एक और समस्या जो सामने आई वो थी षरणार्थियों की समस्या, जिसने समाज को काफी प्रभावित किया। इस समस्या के सामाजिक प्रभाव का सम्यक् आकलन करते हुए रामदरष मिश्र लिखते हैः– ''इतना ही नहीं पुरुश और नारी, दोनों में जहाँ कर्मठता उभरी, वहीं धूर्तता, असत्यप्रियता और चोरी का भी उदय हुआ और होते–होते यह एक स्थायी भाव बन गया। इस प्रकार नयी परिस्थिति और परिवेष में नवीन आवष्यकताओं के कारण षरणार्थियों में तो जीवन मान बदले ही, साथ ही साथ यहाँ के समाज के जीवन मान को भी उन्होंने प्रभावित किया।''

साम्प्रदायिक समस्या के प्रत्येक पहलू पर 'यषपाल जी' ने दृश्टि डाली है व मुख्य समस्या राजनैतिक समस्या को स्वीकार किया हैं। इस सच्चाई पर लेखक ने संपादकीय भाशा में 'झूठा–सच' उपन्यास के पात्र पुरी के माध्यम से प्रकाष डाला है :–

''लीग के लीडर और जिन्ना मजहबी मुसलमान नहीं हैं, पॉलीटिकल मुसलमान हैं। उन्हें हुकूमत करने का मौका चाहिए। कानून हिन्दू और मुसलमानों के लिए दो नहीं हो सकते।''[6]

'देषद्रोही' उपन्यास में बद्री बाबू राजाराम को मजदूर और मालिक के संबंधों की चर्चा करते हुए कहते हैं – 'कांग्रेस यदि मजदूरों की सहायता करती है तो उसमें मालिकों का भी उतना ही हित है। मजदूरों को मालिकों का षत्रु न बनने देकर दोनों में मेल बनाए रखना कांग्रेस का कर्त्तव्य है। विरोध होने से दोनों की ही हानि है। दोनों में परस्पर प्रेम और सेवा–भाव होना चाहिए।''[7]

'दादा–कॉमरेड' उपन्यास में भाशा के माध्यम से रोमांस और राजनीति का सुंदर मिश्रण हुआ है। षैल हरीष से प्यार करती है और वह हरीष को कहती है, ''तुम अपनी अवस्था नहीं समझते, कदम–कदम पर तुम्हारे लिए कितना भय है।''[8]

'मनुश्य के रूप' उपन्यास में भी सरल, सहज, प्रसंगानुकूल लोक–भाशा का प्रयोग किया है। इस उपन्यास में जब धनसिंह की मोटर की टक्कर सोमा से होती है तब धनसिंह सोमा से पूछता है, ''तेरा नाम क्या है?'' तब सोमा चलते–चलते उत्तर देती है – ''तुम बहुत भले लोग हो जी। दो बरस में कोई भी

मुझसे ऐसा नहीं बोला। तुम्हारा भला हो, तुम्हारे घर कहाँ हैं जी?''[9] इसमें सोमा द्वारा पहाड़ी बोली का समुचित प्रयोग किया हुआ दिखाया गया है।

भाषा भावों के प्रकटीकरण में समर्थ होनी चाहिए क्योंकि ऐसी भाषा ही साहित्यापयोगी होगी और उसी में संप्रेषणीयता का गुण भी होगा। भाषा में अलंकारों का प्रयोग भी होना चाहिए क्योंकि अलंकार भाषा और भावों में चमत्कार और सौन्दर्य उत्पन्न करने वाले तत्त्व होते हैं। भाषा में विषयानुकूल तत्सम्, तद्भव, देशज और विदेशज शब्दों का चयन करना चाहिए।

कई बार लेखक के लिए संवेदनषील सर्जनात्मक प्रतिभा के लिए ऐसे युगक्षण सदा ही चुनौती बनते हैं क्योंकि एक और तो उन क्षणों में उसे मानव चेतना के ऐसे रूप दिखाई पड़ जाते हैं जो साधारणतया सुलभ नहीं होते, इसलिए उन्हें किसी कलात्मक रूप में लिपिबद्ध करने का बड़ा तीव्र आकर्शण होता है, दूसरी ओर ऐसे क्षणों में एक साथ ही इतना कुछ केन्द्रित होकर घटित होता है कि उसमें से सार्थक और निरर्थक का चयन असम्भव नहीं तो कठिन अवष्य हो जाता है। इसके अतिरिक्त ऐसे समय घटनाओं, भावों, विचारों, अनुभूतियों की गति में इतनी तीव्रता रहती है कि उन्हें किसी विवेकपूर्ण क्रम में रखना दुश्कर होता है। स्वाधीनता के बाद देष के विभाजन को लेकर लिखा गया यषपाल का 'झूठा–सच' उपन्यास ऐसे अन्तर्द्वन्द्व या अन्तर्विरोध का बड़ा महत्त्वपूर्ण उदाहरण है।

इस प्रकार लेखक ने वातावरण की सृश्टि, रीति–रिवाज़ों व परंपराओं के उद्घाटन, पर्व–त्योहारों के आयोजन में लोकगीतों की सृश्टि व प्रसंगानुकूल भाषा की सृश्टि करके समस्त लोक–जीवन व संस्कृति को पाठकों के समक्ष उजागर कर दिया है।

यषपाल जी के उपन्यास विभाजन से संबंधित होने के कारण स्वाभाविक रूप से उससे प्रभावित क्षेत्रों की भाशाओं में लिखे गये जैसे – उर्दू, हिन्दी, बांग्ला और पंजाबी व अंग्रेज़ी। उसी भाशा का प्रयोग उन्होंने अपनी रचनाओं में किया है। वे हिन्दी भाशा का परिमार्जित रूप भी जानते थे। कई षहरों में रहने के कारण प्रादेषिक षब्दावली का प्रयोग भी उन्होंने अपने उपन्यासों में किया है। अंग्रेज़ी भाशा के ज्ञाता होने के कारण व्यवहार में प्रचलित अंग्रेज़ी षब्दों का प्रयोग भी इन्होंने खूब किया है। 'झूठा–सच' उपन्यास के भाग–2 में ष्यामा तारा का परिचय दूसरे अतिथियों से करवाती हुई अंग्रेज़ी में कहती है –

''मीट, मिसेज, सूर्या।''

''वेरी प्लीज्ड टू मीट यू।'' तारा ने मिसेज सूर्या से हाथ मिलाया।

''आप मिस्टर रावत, सेक्रेटरी होम मिनिस्टरी।''

''प्लीज्ड टू सी यू सर !'' तारा ने रावत की तीखी आँखें मिलते ही आँखें झुका लीं।

''मिस्टर डे, डिपुटी सेक्रेटरी पब्लिक वर्क्स।''

''ग्लैड टु मीट यू सर।''

''मिस्टर सूर्या, सेक्रेटरी हेल्थ।''

''वेरी ग्लैड टू हैव यू मेट सर।'' तारा सबको हाथ जोड़–जोड़ कर नमस्कार करती गयी।[10]

उन्होंने अपने उपन्यासों में सरल व सुबोधगम्य भाशा का प्रयोग किया क्योंकि वे अपना संदेष जन–जन तक पहुँचाना चाहते थे। अतः प्रायः उनकी भाशा में न तो दुरुहता है, न अपने ज्ञान का प्रदर्षन, न अप्रसिद्ध व कठिन षब्दों का ज्यादा प्रयोग। भाशा चाहे उपन्यास की हो या काव्य की, साहित्य–सृश्टा की भाशा व षब्दावली का प्रभाव उस पर अवष्य पड़ता है। उन्होंने कहीं–कहीं तद्भव षब्दों का प्रयोग भी किया है। लेखक ने कई जगहों पर संस्कृत के षब्दों को प्रयोग भी विशयानुकूल किया है जैसे – महापण्डित को किसी भी वाद के प्रति पूर्ण सत्य का आग्रह न था, न वे किसी वाद को पूर्णतः मिथ्या ही कह पाते थे। वेद वचन – ''एकं सद् विप्राः बहुधा वदन्ति' ही उनका उदार मत था।[11]

क्षुब्ध अभ्यागत नमस्कार का उत्तर गम्भीरता से देकर अर्घ्य ग्रहण करने से पूर्व ही बोला – ''भद्रे, महाश्रेश्ठी प्रेस्थ का पुत्र मैं, पृथुसेन धर्मस्थ के द्वार पर न्याय भिक्षा के लिये प्रस्तुत हुआ है।''

आस्थानागार के मुखद्वार के तोरण से पिंजरे में लटकी वाचाल सारिका बोल उठी– ''न्याय्यात्पथं प्रविचलन्ति पदं न धीराः।''[12]

'झूठा–सच' उपन्यास में ''मा निशाद प्रतिश्ठां त्वमगम ...।''[13]

उन्हें अपने उपन्यासों में देषज और विदेषी षब्दों का प्रयोग भी किया है। यषपाल जी ने अपने उपन्यासों में उर्दू के षब्दों का भी खूब प्रयोग किया है– निफाक (विरोध), कुष्तोखून (उपद्रव और रक्तपात), इल्म (इज्जत), अमनो–अमान (षान्तिपूर्वक), महफूज (सुरक्षित), तवारीख (इतिहास), फरसा (तलवार), हामला (गर्भिणी), जरदा (मीठा भात), जौक (स्वभाव), इबलिस (षैतान), तंबी (पाजामा), फरिष्ता–सीरत (दिव्य गुण) आदि। 'झूठा–सच' उपन्यास में लेखक षब्दों के अर्थ कोश्ठकों में देते चलते हैं। ठेठ पंजाबी षब्दों और वाक्यांषों के हिन्दी रूपान्तरण का उदाहरण देखिये – उलाहनी (विलाप के बोल), डिट्ठे पलंगा वालिए (भरे–पूरे घर वाली), हुंदया हुक्मां वालिए (जिसका हुक्म चलता है), लग्गे बागां वालिए (अनेक बागों की मालकिन), पासे हो जा धिए (एक तरफ हो जा बेटी), बीबिये भैणे (अच्छी बहन), मटियार (ऊर्ध्वयौवना), प्रसाद (भोजन), चूंडी (चुटकी), षावा पुत्रो षावा (षाबाष बच्चों षाबाष), ट्रंकी (सूटकेस), रब्ब का कहर (भगवान का अभिषाप), भैडा (खराब आदमी), बल्लो–बल्लो (बिटिया–बिटिया), पैरी पैणा (पाय लागन), सोहणयो (हे प्रियदर्षन), भैड़या (बुरा लड़का) आदि। कहीं–कहीं संकर षब्द भी हैं जैसे – दवा–दारू, लेना–देना, मोल–भाव, ठीक–ठीक, जैसे–तैसे आदि जो स्वाभाविक बोलचाल के षब्द हैं। उन्होंने स्वाभाविक बोलचाल के षब्दों का प्रयोग भी बहुत अच्छी तरह से दिखाया है। वस्तुतः इस प्रकार के षब्दों के प्रयोग का मूल कारण है – पात्रानुकूल व प्रसंगानुकूल भाशा। 'देष–द्रोही' उपन्यास में जब वजीरियों द्वारा डॉक्टर को उठा लिया जाता है तब उनके गिरोह के प्रतिनिधि के रूप में एक अधेड़ वजीरी डॉक्टर से प्रष्न करता है – ''तुम क्या आदमी है?

''डॉक्टर !'' डॉक्टर ने उत्तर दिया।

''तुम्हारा घर किधर है?'' तुम हिन्दू है कि मुसलमान? तुम पैसा वाला आदमी है? तुम चीटी लिखेगा अपने आदमी को। हमको तुम्हारा फिदिया मिलने से तुमको बन्नू, कोहाट, डेरा इस्मीलखाँ जहाँ बोलेगा, छोड़ देगा। नहीं हम तुमको गजनी में बेच देगा।''[14] कहीं–कहीं उन्होंने ऐसी षब्दावली का प्रयोग किया है जो भावपूर्ण, कोमल भावों की अभिव्यक्ति करती है। वे अपने उपन्यासों में उसी प्रकार के षब्दों का प्रयोग करते हैं जो सर्वथा उपयुक्त हों। षब्दावली की विविधता से यषपाल के उपन्यासों की भाशा–षैली विविधोन्मुखी भी है और महत्त्वपूर्ण भी। जिस कारण उनके यह उपन्यास हिन्दी साहित्य में अपना विषिश्ट स्थान बनाये हुए है। 'मनुश्य के रूप' उपन्यास में जब धनसिंह सोमा से उसका नाम पूछता है तो सोमा उसे उत्तर देती है – ''तुम बहुत भले लोग हो जी ! दो वर्श में कोई भी मुझसे ऐसे नहीं बोला। तुम्हारा भला हो, तुम्हारे घर कहाँ हैं जी?''[15]

निश्कर्श

पीढ़ी के अनुकूल भाशा में परिवर्तन हुआ है। उपन्यास के परिवेष को रचने के लिए और भाशा की विष्वसनीयता को बनाए रखने में लेखक सफल हुआ है। लेखक ने षब्दावली का चयन, पात्र और वातावरण को ध्यान में रखकर किया है। उपन्यास का कथानक पंजाब, लाहौर, दिल्ली, नैनीताल, हरियाणा आदि क्षेत्रों तक फैला हुआ है। इसलिए इनके साहित्य में विभिन्न क्षेत्रों की भाशाओं, बोलियों व षब्दावली का प्रयोग कुषलतापूर्वक हुआ है।

संदर्भ

1. यषपाल, 'दादा–कॉमरेड', पृ0 6
2. डॉ. कैलाष वाजपेयी, 'आधुनिक हिन्दी कविता में षिल्प', पृ0 19
3. डॉ. षिवपाल सिंह, 'पंत का काव्य–षिल्प', पृ0 26
4. आजकल : अक्तूबर, 1674 'लेखक और प्रतिबद्धता', पृ0 5
5. डॉ. षिवपाल सिंह, 'पंत का काव्य–षिल्प', पृ0 26
6. यषपाल, 'झूठा–सच' (देष का भविश्य भाग–2), पृ0 106
7. यषपाल, 'देषद्रोही', पृ0 46–47
8. यषपाल, 'दादा–कॉमरेड', पृ0 23
9. यषपाल, 'मनुश्य के रूप', पृ0 12–13
10. यषपाल, 'झूठा–सच' (देष का भविश्य भाग–2), पृ0 157
11. यषपाल, 'दिव्या', पृ0 14
12. यषपाल, 'दिव्या' पृ0 15
13. यषपाल, 'झूठा–सच' (देष का भविश्य भाग–2), पृ0 417
14. यषपाल, 'देष–द्रोही', पृ0 10
15. यषपाल, 'मनुश्य के रूप', पृ0 13